पूर्व मध्यकालीन उत्तर भारत में पर्दा प्रथा एवं नारी

रक्षा सिंह
रिसर्च स्कॉलर, इतिहास विभाग
एम0जे0पी0 रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली
Email: rakshabcb@gmail.com

सारांश

पर्दा एक ऐसा आवरण है, जो नारियों के स्वतंत्र अस्तित्व को ढककर उसके अधिकारों को सीमित करता है और उसके व्यक्तित्व में कमी लाता है। इस प्रथा का उल्लेख प्राचीन भारतीय सामाजिक व्यवस्था में नहीं मिलता है। वेदों, पुराणों, महाकाव्यों आदि धर्मग्रन्थों से पता चलता है कि नारी इस काल में स्वतंत्र थी तथा उस पर पर्दे का प्रतिबन्ध नहीं था। पूर्व मध्यकालीन उत्तर भारतीय समाज में भी नारी स्वतन्त्र थीं। इस काल में पर्दे के स्थान पर अवगुण्ठन और आवरण का वर्णन मिलता है। अवगुण्ठन का प्रयोग नारियाँ अपनी इच्छानुसार तथा जब उन्हें अपनी पहचान छुपानी होती थी तब करती थीं। इसके लिए कोई सर्वमान्य अनिवार्य नियम पूर्व मध्यकालीन उत्तर भारतीय समाज में नहीं था। इस काल में पर्दा शब्द से आशय नारियों में उपस्थित उसके चारित्रिक गुणों तथा लज्जा, शिष्टता और नैतिकता से था। इस काल में नारियाँ बिना किसी आवरण के ही शिक्षा ग्रहण करती थीं, विभिन्न प्रतियोगिताओं में पुरूषों के साथ वाद–विवाद करती थीं, संरक्षिका एवं संचालिका का उत्तरदायित्व निभाती थीं, युद्ध के मैदान में अपने शौर्य का परचम लहराती थीं, राजसभा में राजदूतों के समक्ष उपस्थित होती थीं, धर्मगुरूओं से धर्मज्ञान प्राप्त करती थीं, शुभ अवसरों पर सभी लोगों के समक्ष नृत्य–गान करती थीं, नदियों एवं तालाबों में क्रीड़ा करती थीं, विभिन्न प्रकार के खेलों में भाग लेती थीं, जीविकोपार्जन के लिए कृषि एवं अन्य कार्यों को करती थीं। इस काल में होने वाले विभिन्न आक्रमणों का प्रभाव नारी समाज पर भी पड़ा। नारियाँ आक्रान्ताओं से अपनी पहचान छुपाने के लिए अपने मुख पर अवगुण्ठन धारण करने लगी। राज परिवारों और सम्भ्रान्त वर्ग की नारियों में कभी–कभी आंशिक रूप से इसका प्रचलन था, परन्तु साधारण वर्ग की नारियों में इसका प्रचलन नहीं था।

Reference to this paper should be made as follows:

Received: 09.09.2020
Approved: 29.09.2020

रक्षा सिंह

पूर्व मध्यकालीन उत्तर भारत में पर्दा प्रथा एवं नारी

RJPP 2020,
Vol. XVIII, No. II,
pp.230-234
Article No. 28

Online available at *:*
https://anubooks.com/?page_id=6391

प्रस्तावना

पर्दा प्रथा एक ऐसी सामाजिक बुराई है जो नारी के स्वतन्त्र अस्तित्व को ढककर उसके आत्मविश्वास में कमी लाती है, जिससे उसके व्यक्तित्व का ह्रास होता है। यह प्रथा प्राचीन भारतीय सभ्यता का अंग नहीं थीं। वेदों, पुराणों, महाकाव्यों आदि धर्मग्रन्थों में इसका उल्लेख नहीं मिलता है। मनु, याज्ञवल्क्य, आदि धर्मशास्त्रकारों ने भी अपने ग्रन्थो में पर्दे का उल्लेख नहीं किया है। इस काल में नारी स्वतन्त्र थी। उसपर पर्दे का प्रतिबन्ध नहीं था। वह स्वतन्त्रतापूर्वक सभी स्थानों पर विचरण कर सकती थी। भारतीय समाज में पर्दे के स्थान पर अवगुण्ठन और आवरण का उल्लेख मिलता है। इस युग के समाज में पर्दा शब्द से अभिप्राय नारियों में उपस्थित चारित्रिक गुणों से था। नारी सुलभ लज्जा, शिष्टता और नैतिकता ही प्राचीनकाल में नारी के लिए पर्दा माने जाते थे इसके लिए किसी आवरण की आवश्यकता नही होती थी। पर्दे का प्रयोग नारियों द्वारा अपनी इच्छानुसार किया जाता था। नारियों को जब किसी कारणवश अपनी पहचान छुपानी होती थी तो वह पर्दा करती थीं। प्राचीन समय की सामाजिक व्यवस्था में पर्दा प्रथा के जो भी उदाहरण प्राप्त होते हैं, उनमें शिष्टाचार और अपने वास्तविक स्वरूप को प्रकट न करने के लिए ही नारियों द्वारा अवगुण्ठन का प्रयोग किया जाता था। पूर्व मध्यकालीन उत्तर भारत में भी नारियाँ शिष्टाचारवश ही पर्दा करती थीं, इसके लिए कोई सर्वमान्य नियम नहीं था। प्रस्तुत शोध अध्ययन मेरी पी–एच0डी0 शोध प्रबन्ध शीर्षक से लिया गया है।

आलोच्यकालीन समाज में भी नारियों द्वारा मुख पर अवगुण्ठन किये जाने के सन्दर्भ प्राप्त होते हैं। हर्षचरित में बाणभट्ट ने उल्लिखित किया है कि सम्भ्रान्त परिवार की नारियाँ शिष्टाचारवश घर से बाहर जाते समय कभी–कभी अपने मुख पर आवरण धारण करती थीं।[1]एक अन्य स्थान पर वर्णित है कि मालती नाम की नारी ने बाहर विचरण करते समय नीले रंग की जाली से अवगुण्ठन किया था।[2] हर्षचरित में ही राज्यश्री द्वारा विवाह के समय अपने पति के सम्मुख अपना मुख लाल रंग के रेशम के अवगुण्ठन से ढ़का हुआ व्यक्त किया गया है।[3] कादम्बरी के अध्ययन से ज्ञात होता है कि पत्रलेखा जब चन्द्रापीड़ से मिलने जाती है, तब उसने लाल रंग की चुनरी ओढ़ रखी थी। बाणभट्ट ने चुनरी के साथ ही साथ पत्रलेखा की मुख कांति को सुन्दरता का भी वर्णन किया है, इससे यह प्रतीत होता है कि उसने चुनरी मुख पर धारण नहीं किया था।[4] इसी ग्रन्थ से यह भी पता चलता है कि महाश्वेता जब अपने प्रेमी से मिलने जाती है तब अपने परिजनों से अपनी पहचान छुपाने के लिए वह लाल कपड़े से बना हुआ अवगुण्ठन मुख पर पहनती है।[5] परन्तु महाश्वेता अन्य सभी स्थानों पर पर्दे के बिना ही घूमती हुई वर्णित की गयी है। प्रियदर्शिका में कहा गया है कि अविवाहित कन्या के दर्शन में कोई दोष नहीं होता है अर्थात इस काल में अविवाहित कन्यायें पर्दा नहीं करती थीं।[6] हर्ष ने नागानन्द में वर्णित किया है कि अविवाहित कन्या के लिए पर्दे की कोई आवश्यकता नहीं होती है। यह विवाहित नारियों के लिए है।[7]

परन्तु नारियों के अवगुण्ठन के विषय में वाचस्पति मिश्र ने सांख्यतत्व कौमुदी में लिखा है कि कुलीन नारियों के सिर के वस्त्र खिसकने नहीं चाहिए अन्यथा वे दूसरे पुरूषों द्वारा देखी जा सकती हैं।[8] इससे ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ नारियाँ दूसरे पुरूष के समक्ष अवगुण्ठन का

प्रयोग करती थीं, जो शालीनता एवं शिष्टाचार माना जाता था।

इस काल में नारियों द्वारा पर्दे का विरोध किये जाने के साक्ष्य होते हैं। इस काल में पर्दे के स्थान पर नारियों के सच्चरित्रता और उसकी पवित्रता को ही पर्दा माना जाता था। राजशेखर ने बालरामायण में कहा है कि नारी का पर्दा उसका आचरण है, इसके लिए बाहरी आवरण की कोई आवश्यकता नहीं होती है।[9] कथासरित्सागर से विदित होता है कि रत्नप्रभा नामक नारी ने पर्दे का विरोध किया था। इसमें रत्नप्रभा अपने पति से कहती है कि नारियों की रक्षा तथा उन पर नियंत्रण उनके आचरण में पवित्रता से ही सम्भव है। चंचल नारियों की रक्षा हम भी नहीं कर सकते।[10] अतः नारियों के लिए किसी बाहरी आवरण की आवश्यकता नहीं होती।

पूर्व मध्यकालीन समाज में नारियाँ बिना पर्दे के ही विदेशियों से मिलती थीं। राज्यश्री ने चीन से आये विदेशी यात्री हवेनसांग से बिना मुख पर अवगुण्ठन किये ही भेंट किया था।[11] हवेनसांग के भारतीय यात्रा वृतान्त से पता चलता है कि मगध के शासक बालादित्य की माँ जब विदेशी हूण आक्रमणकारी मिहिरकुल से राजदरबार में मिली थी तब उन्होंने पर्दे का अवगुण्ठन नहीं किया था।[12] यदि नारियों द्वारा पर्दा किया जाना अनिवार्य होता तो वे, किसी विदेशी से मुख पर आवरण धारण किये बगैर न मिलती।

दसवीं शताब्दी में अरब से भारत आयेयात्री अबुजैद ने भारतीय समाज की नारियों की स्थिति के बारे में बताया है कि नारियों को राजसभा में भाग लेने की अनुमति थी। वे विदेशियों के सामने भी पर्दे के बिना ही राजसभा में उपस्थित होती थीं।[13] वीसलदेवरासो के अनुसार वीसलदेव के उड़ीसा जाने से पूर्व उनकी माता ने राजदरबार में मंत्रियों के साथ बैठकर मंत्रणा की थी।[14] नैषधचरितम् से भी विदित होता है कि राजा नल की रानियाँ अन्य दूसरे पुरूषों के सामने पर्दा नहीं करती थीं।[15]

आलोच्य काल में भारतीय समाज में नारियों द्वारा पर्दे की प्रथा का प्रचलन व्यापक रूप में नहीं था। इस काल में कन्यायें राजदरबार में आये दूत के समक्ष भी अपनी नृत्य एवं संगीत प्रतिभा का प्रदर्शन करती थीं। कथासरित्सागर से ज्ञात होता है कि राजकुमारी मृगावती ने राजदरबार में आये हुए सहस्त्रानीक के दूत के समक्ष नृत्य कला को प्रदर्शित किया था।[16] इस काल में नारियाँ उद्यान, तीर्थ स्थान एवं अन्य सभी स्थानों पर विचरण कर सकती थीं। कथासरित्सागर में पद्मावती तथा अन्य बहुत सी नारियों का उल्लेख हुआ है जो स्वतंत्रतापूर्वक सभी स्थानों पर जाती थीं।[17] नारियाँ विभिन्न जुलूसों तथा महोत्सवों को देखने के लिए बिना पर्दे के ही अपनी छतों पर खड़ी हो जाती थीं।[18]इस काल की नारियाँ स्वतंत्रता पूर्वक विभिन्न प्रकार की विचारगोष्ठी, प्रतियोगिताओं में भाग लेती थीं। वे युद्ध कला में निपुण थीं और युद्ध के मैदान में अपनी शक्ति द्वारा शत्रुओं को पराजित करती थीं। रानी कुमार देवी, नाईकादेवी ने शत्रु सेना को पराजित किया था। रानी सुगन्धा, दिद्दा आदि ने शासन संचालन सफलता पूर्वक किया था। नारियों को गान्धर्व विवाह एवं स्वयं वर चयन करने का अधिकार समाज द्वारा प्रदत्त था तथा वे कृषि कार्य करते समय भी पर्दे का प्रयोग नहीं करती थीं। रत्नावली, दशकुमारचरितम्, राजतरंगिणी इत्यादि ग्रन्थों में भी नारियों द्वारा पर्दा किये जाने का साक्ष्य प्राप्त नहीं होता है। नारियों को सभी

कार्यों को करने की अनुमति समाज द्वारा प्रदान की गयी थी। फिर युद्ध के मैदान हो या नष्त्य संगीत का कार्यक्रम या गृहस्थ जीवन का संचालन वे पर्दा करती हुई कहीं दिखायी नहीं देती। खजुराहों की मूर्तिकला में भी पर्दा की गयी नारियों का अंकन प्राप्त नहीं होता है। अपितु नारियों की केशसज्जा को दर्शाया गया है। तेजपुर अभिलेख से भी पता चलता है कि असम तथा बंगाल की नारियाँ पर्दे का प्रयोग नहीं करती थीं।[19]

इस युग की साजिक व्यवस्था में पर्दे का प्रचलन नारियों द्वारा विशेष अवसरों पर यदा–कदा किये जाने के उदाहरण मिलते हैं। उसका व्यापक प्रचलन भारत में मुस्लिम आक्रमणों के पश्चात् होने लगा। मुस्लिम आक्रान्ताओं से अपनी सुरक्षा एवं अपनी सुन्दरता तथा पहचान छुपाने के लिए नारियों ने अपने मुख पर अवगुण्ठन धारण किया तथा अपने आपको घरों में कैद करने लगी। अर्थात् पूर्वमध्यकाल के उत्तरार्द्ध में ही इस प्रथा के स्वरूप का विस्तार होना प्रारम्भ हुआ।

इस प्रकार पूर्व मध्यकालीन भारतीय समाज में पर्दा प्रथा परिस्थिति और आवश्यकता के अनुसार प्रचलित थी। राजपरिवारों और अभिजात वर्ग की नारियों में कभी–कभी आंशिक रूप से इसका प्रचलन विद्यमान था। परन्तु जनसाधारण में इसका प्रचलन नहीं था। पर्दा प्रथा विवेच्यकाल में नारियों की इच्छा पर निर्भर था। आधुनिक पर्दा प्रथा की तरह पूर्वमध्यकालीन समाज में पर्दा प्रथा प्रचलित नहीं थी। नारियाँ मुख पर बिना आवरण के ही स्वच्छन्द रूप से उत्सवों में भाग लेती थीं, वे राजदूतों से मिलती थीं, धार्मिक गुरूओं से शिक्षा ग्रहण करती थीं और सामूहिक तथा व्यक्तिगत रूप से नष्त्य, संगीत, वाद्य इत्यादि कलाओं को बिना किसी लज्जा एवं संकोच के गर्व के साथ प्रस्तुत करती थीं। वे विभिन्न प्रतियोगितओं में बिना अवगुण्ठन के ही भाग लेती थी। नारियों को पर्दे के बिना ही तीर्थ यात्राओं पर जाने तथा नदियों में स्नान करने की स्वतन्त्रता की स्वीकृति समाज द्वारा प्राप्त थी।

संदर्भ ग्रंथ

1. *बाणभट्ट,* हर्षचरितम्, सम्पादक काशीनाथ पाण्डुरप्र परब, संशोधनकर्ता श्री निवास वेंकट्राम तोप्पूर, तुकाराम जावाजी, निर्णय सागर प्रेस, बॉम्बे, 1918, उच्छवास–3, पृ0–**98**।
2. वही, उच्छ्वास–1, पृ0–**32**।
3. वही, उच्छ्वास–4, पृ0–**146**।
4. *बाणभट्ट, कादम्बरी,* टीकाकार पाण्डेय रामतेज शास्त्री, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2012, पूर्वभाग, पृ0–**212**।
5. वही, पूर्वभाग, पृ0–**335**।
6. *श्री हर्षदेव, प्रियदर्शिका,* टीकाकार पण्डित रामचन्द्रमिश्र, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2009, अंक–2, पृ0–**32**।
7. *श्री हर्ष, नागानन्दम,* हरजीत सिंह, लाहौर बुक शाप, लुधियाना, 1952, अंक–1, पृ0–**30**।
8. *वाचस्पति मिश्र,* सांख्यतत्व कौमुदी, टीकाकार रामशंकर भट्टाचार्य, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी, 1976, कारिका–61, पृ0–**331**।

[9]. डॉ0 राधवेन्द्र प्रताप सिंह, *पूर्वमध्यकालीन उत्तर भारत का सामाजिक इतिहास,* कला प्रकाशन, वाराणसी, संस्करण–1, 2008, पृ0 **107**।

[10]. महाकवि सोमदेव भट्ट, *कथासरित्सागर,* द्वितीय खण्ड, अनुवादक पं0 केदारनाथ शर्मा सारस्वत, बिहार राष्ट्र भाषा परिषद, पटना, 2005, संस्करण–3, लम्बक–7, तरंग–2, श्लोक–5 से 8, पृ0–27।

[11]. रायबहादुर गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, *मध्यकालीन भारतीय संस्कृति* (600 से 1200 ई0), हिन्दुस्तानी एकेडमी, प्रयाग, 1928, पृ0–**54**।

[12]. थॉमस वाटर्स, *ऑन युआन च्वांग ट्रेवल्स इन इण्डिया* 629–645 ए0डी0, एडिटेड बाई थॉमस वलियम राइस डेविड्स एंड स्टीफन वूटन बूशेल, रॉयल एशियाटिक सोसायटी, लंदन, 1904, पृ0–**288–89**।

[13]. एच0एम0 इलियट एंड जॉन डॉसन, *द हिस्ट्री ऑफ इण्डिया एज टोल्ड बाई इट्स ओन हिस्टोरियन्स,* द मोहम्डन पिरियड्स, वॉल्यूम–**I**, ट्रबनर एण्ड कम्पनी लंदन, 1867, पृ0–**11**।

[14]. *नरपति नाल्ह,* वीसलदेव रासो, सम्पादक सत्य जीवन वर्मा, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, नारस, 1912, सर्ग–2, श्लोक–66, पृ0–**56।**

[15]. श्री हर्ष, नैषधचरितम्, पूर्वभाग, व्याख्याकार प्रेमचन्द्र पंडित, बैप्टिस्ट मिशन प्रेस, कलकत्ता, 1836, सर्ग–3, श्लोक–43, पृ0–**187 एवं 188।**

[16]. महाकवि सोमदेव भट्ट, *कथासरित्सागर,* प्रथम खण्ड, अनुवादक स्वर्गीय पं0 केदारनाथ शर्मा सारस्वत, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, संस्करण–1, 1960, लम्बक–2, तरंग–1, श्लोक–40, पृ0–**125।**

[17]. वही, लम्बक–3, तरंग–2, श्लोक–17, 24, पृ0–**263**।

[18]. वही, लम्बक–2, तरंग–6, श्लोक–19, पृ0–**227**।

[19]. राधवेन्द्र प्रताप सिंह, *पूर्वमध्यकालीन उत्तर भारत का सामाजिक इतिहास,* पूर्वोद्धत, पृ0–**107**।